सम्पादकीय

आत्मश्रद्धान, तत्वार्थश्रद्धान के साथ-साथ सच्चे देव-शास्त्र-गुरु की श्रद्धा को भी सम्यग्दर्शन कहा गया है। आचार्य समन्तभद्र के शब्दों में--

"श्रद्धानं परमार्थानामाप्तागमतपोभृताम्।

त्रिमूढापोढमष्टांगं सम्यग्दर्शनमस्मयम्।।"

"सच्चे देव-शास्त्र-गुरु का श्रद्धान ही सम्यग्दर्शन है। वह सम्यग्दर्शन तीन मूढताओं एवं आठ मदों से रहित और आठ अंगों से सहित होता है।"

वीतरागी-सर्वज्ञदेव, वीतरागता की पोषक उनकी पवित्र वाणी एवं मोक्षमार्ग पर चलनेवाले समस्त बाम्हभ्यन्तर परिग्रहों से रहित नग्न दिगम्बर भावलिंगी सन्तों के अनन्य उपासक ज्ञानी धर्मात्माओं के भी जबतक राग की कणिका विद्यमान रहती है, तबतक सच्चे देव-शास्त्र-गुरु के प्रति भक्ति का भाव आये बिना नहीं रहता, नियम से आता ही है।

भक्ति के सन्दर्भ में जैनदर्शन का दृष्टिकोण समझने के लिए आचार्यकल्प पण्डित प्रवर टोडरमलजी का निम्नांकित कथन गहराई से मनन करने योग्य है--

"तथा कितने ही जीव भक्ति को मुक्ति का कारण जानकर वहाँ अति अनुरागी होकर प्रवर्तते हैं। वह तो अन्यमती जैसे भक्ति सो मुक्ति मानते हैं,वैसा भी इनके भी श्रद्धान हुआ, परन्तु भक्ति तो रागरुप है और राग से बंधा होता है, इसलिए मोक्ष का कारण नहीं है। जब राग का उदय आता है;तब भक्ति न करे तब पापानुराग हो, इसलिए अशुभराग छोडने के लिए ज्ञानी भक्ति में प्रवर्तते हैं और मोक्षमार्ग को बाह्य निमित्त मात्र भी जानते हैं,परन्तु यहाँ ही उपादेयता मानकर सन्तुष्ट नहीं होते, शुद्धोपयोग के उद्यमी रहते हैं।

वहीं पंचास्तिकाय व्याख्या में कहा है -- 'इयं भक्तिः केवलभक्ति-प्रधानस्याज्ञानिनो भवति। तीव्ररागज्वरविनोदार्थमस्थानरागनिषेधार्थं क्वचित् ज्ञानिनोऽपि भवति।'

अर्थ -- यह भक्ति केवल भक्ति ही है प्रधान जिसके, ऐसे अज्ञानी जीव

१. रत्नकरण्डश्रावकाचार श्लोक-४

केहोती है तथा तीव्र राग ज्वर मिटाने केअर्थ या कुस्थान केराग का निषेध करने केअर्थ कदाचित् ज्ञानी केभी होती है।

प्रश्न -- वहाँ वह पूछता है -- ऐसा है तो ज्ञानी से अज्ञानी केभक्ति की अधिकता होती होगी।

उत्तर -- यथार्थता की अपेक्षा तो ज्ञानी केसच्ची भक्ति है, अज्ञानी केनहीं है और राग भाव की अपेक्षा अज्ञानी केश्रद्धान में भी उसे मुक्ति का कारण जानने से अति अनुराग है, ज्ञानी केश्रद्धान में शुभबंध का कारण

जानने से वैसा अनुराग नहीं है। बाह्य में कदाचिद् ज्ञानी को अनुराग बहुत होता है -- ऐसा जानना है।१'

उक्त कथन में एक बात अत्यन्त स्पष्ट रुप से कही गई है कि भक्ति तो ज्ञानी अज्ञानी सभी करते हैं, तथापि सच्ची भक्ति तो ज्ञानी जीवों केही

होती है; क्योंकि वे किसीप्रकार की लौकिक कामना से भक्ति में प्रवर्तित

नहीं होते हैं; वे तो विषय-कषाय से बचने केलिए ही भक्ति में प्रवर्तित होते

हैं।

ज्ञानी की भावना व्यक्त करने वाली निम्नांकित पंक्तियॉ द्रष्टव्य हैं--

'आतम केअहित विषय-कषाय, इनमें मेरी परिणति न जाय।

मैं रहूँ आप में आप लीन, सो करो होऊँ, ज्यों निजाधीन।

मेरे न चाह कछु और ईश, रत्नत्रय निधि दीजे मुनीश।'२

'गुणेष्वनुराग: भक्ति:' उक्त सूक्ति केअनुसार गुणों में होनेवाले अनुराग को भक्ति कहते हैं। जबतक राग विद्यमान है तबतक अपने से अधिक गुणवालों केप्रति अनुराग होना, बहुमान का भाव होना एक सहजवृत्ति भी है। अत: यह स्वाभाविक ही है कि ज्ञानी धर्मात्माओं का अनुराग परम वीतरागी देव-शास्त्र-गुरु में सहज ही होता है।

इसप्रकार यह सहज ही सिद्ध है कि एक तो ज्ञानीजनों केहृदय में देव-शास्त्र-गुरु केप्रति सहज ही बहुमान का भाव होता है, दूसरे यदि वे कुछ चाहते भी हैं तो एकमात्र विषय-कषाय से बचना चाहते हैं, आत्मा में ही लीन रहना चाहते हैं, पूर्णत: स्वाधीन होना चाहते हैं।

सहजोदित भक्तिभाव के परिणामस्वरुप कविहृदय ज्ञानी धर्मात्माओं

■ मोक्षमार्ग प्रकाशक, पृष्ठ २२२-२२३

■ पण्डित दौलतरामजी कृत देवस्तुति

द्वारा जो भक्ति साहित्य समय-समय पर लिखा गया, वह आज हमें एक विशाल भण्डार के रुप में उपलब्ध है। इसमें से बहुत सा तो हमारी असावधानी एवं उपेक्षा के कारण कालकवलित हो गया है, बहुत-सा शास्त्र भण्डारों में पडा-पडा प्रकाशन की प्रतीक्षा में है, पर बहुत-सा ऐसा भी है जो निरन्तर पठन-पठान में रहा है। विशेषकर पूजन और भजनों के रुप में उपलब्ध साहित्य सदा ही उपयोग में आता रहा है, भक्तों द्वारा निरन्तर
गाया जाता रहा है।

उपलब्ध भक्ति साहित्य एवं तत्संबंधी प्रवृत्तियों की सम्यक् समीक्षा पण्डित रतनचन्दजी शास्त्री ने प्रस्तावना में विस्तार से कर दी है; अत:उक्त सन्दर्भ में विशेष कुछ लिखने की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक
आत्मार्थी भक्त को उक्त प्रस्तावना का अध्ययन गहराई से अवश्य करना चाहिए।

दैनिक उपयोग में आनेवाली पूजन, भजन, स्तुतियों और भक्तामर आदि स्तोत्रों का प्रकाशन बहुत दिनों से जिनवाणी संग्रह नाम से प्रकाशित होता रहा है। यद्यपि यह सत्य है कि यह भक्ति साहित्य जिनेन्द्रदेव की वाणी नहीं है, अपितु उनकी भक्ति में लिखी गई भक्तों की वाणी ही है; अत: इस भक्त वाणी को जिनवाणी के रुप में प्रस्तुत करने में कुछ अटपटा-सा अवश्य लगता है, तथापि यह नाम अब इतना प्रचलित हो गया कि लगभग सभी भक्तगण पूजन की पुस्तकों को जिनवाणी के नाम से जानने लगे हैं।
यही कारण है कि हमने भी इस संग्रह का नाम 'बृहज्जिनवाणी संग्रह' रखना ही उचित समझा है।

मेरे मन में इसप्रकार के संग्रह को सुव्यवस्थित रुप से सम्पादित कर प्रकाशित करने की भावना बहुत दिनों से थी। इसकी चर्चा भी अनेक बार हुई, पर यह कार्य समयाभाव के कारण सम्पन्न न हो सका।

अखिल भारतीय जैन युवा फैडरेशन के राष्ट्रीय अध्यक्ष ब्र. जतीशचन्द शास्त्री की तीव्रतम भावना थी कि इस कृति का सम्पादन मेरे ही द्वारा हो,पर यह सत्य है कि इस कृति के लिए

जितना समय मुझे देना चाहिए था,उतना समय मैं नहीं दे सका हूँ। यद्यपि प्रथम संस्करण छपने केबाद मैंने इस कृति को आद्योपान्त अच्छी तरह से देख लिया है और इसमें आवश्यक संशोधन एवं परिवर्धन भी किए हैं, फिर भी कुछ न कुछ कमियाँ तो इसमें अब भी रह गईं हैं, जिन्हें आगामी संस्करण में ठीक करने का प्रयत्न करेंगे।

वैसे मैं इस प्रकाशन से रंचमात्र भी असंतुष्ट नहीं हूँ, तथापि परिमार्जन की आवश्यकता तो प्रत्येक कृति में सदा रहती ही है।

इस कृति को सर्वोपयोगी बनाने के लिए इसमें वे सभी चीजें समाहित कर ली गई हैं, जिनकी आवश्यकता धर्मप्रेमी समाज को अपने दैनन्दिनी जीवन में पडती रहती है। यद्यपि इस कारण इसका कलेवर बडा हो गया है, तथापि किसी की भी उपेक्षा हमें अभीष्ट न थी।

पाठको की अधिकतम सुविधा के लिए इसमें समाहित विषय-वस्तु को जिन सात खण्डों में समाहित किया गया है, वे इसप्रकार हैं--

१. स्तुति खण्ड २. नित्य-नियम पूजन खण्ड

३. विशष पूजन खण्ड ४. चौबीस तीर्थंकर पूजन खण्ड

५. पर्व पूजन खण्ड ६. आध्यात्मिक पाठ खण्ड

७. बारह भावना खण्ड

सभी खण्डों में प्रचलित सभी प्राचीन-नवीन सामग्री को संकलित किया गया है, जिससे जिसकी भावना जिस पूजन आदि करने की हो, वह अपनी रुचि केअनुसार उसी को कर सकें।

जिनकी दृष्टि कमजोर हो गई है, उन वयोवृद्धों की सुविधा को ध्यान में रखते हुए प्राय: सर्वत्र ही यथासंभव बडा टाइप लगाने की कोशिश की गई है। इसीप्रकार जहाँ मक संभव हुआ है, नई सामग्री नये पेज से आरम्भ की गई है, खाली स्थानों को सुन्दरतम सूक्तियों व आध्यात्मिक भजनों से

स्जाया गया है।

क्षमाशील सहयोगी वृत्ति केपाठकों से अनुरोध है कि वे त्रुटियों केलिए क्षमा करते हुए भी महत्वपूर्ण सुझावों से अवश्य अवगत करावें जिससे आगामी संस्करण में उनकेसुझावों का लाभ उठाकर यथासंभव सुधार

किया जा सके।

यदि हम इस कृति के माध्यम से आपकी जिनेन्द्र भक्ति में थोडे भी सहयोगी बन सके तो हम और हमारे सहयोगी अपने श्रम को सार्थक ही समझेंगे।

डॉ. हुकमचन्द भारिल्ल